संपादकीय

जब-जब देश में बच्चों की शिक्षा में सुधार के प्रयत्न किए जाते हैं, गुणवत्तापूर्ण शिक्षा प्रदान करने का लक्ष्य मुखरित हो उठता है। पाठ्यचर्या की नई रूपरेखाएँ सामने आती हैं। नए पाठ्यक्रमों और पाठ्यपुस्तकों का निर्माण किया जाता है, साथ-ही-साथ शिक्षकों के प्रशिक्षण के प्रयास भी होते हैं परंतु फिर भी पाँच से दस साल के पश्चात् हम पाते हैं कि जिस तेज़ी से सामाजिक, आर्थिक और तकनीकी परिवर्तन हुए हैं उस अनुपात में शिक्षा व्यवस्था में परिवर्तनों की गति काफ़ी धीमी है और नतीजा यह होता है कि हमने जिन सुधारों के लिए पाँच से दस वर्ष पहले गुहार लगाई होती है, वही गुहार फिर से लगने लगती है और सुधार का नया चक्र आरंभ हो जाता है।

भारत जैसा विशाल जनसंख्या और समृद्ध विविधता वाला देश जहाँ पचपन लाख से ज़्यादा शिक्षक और दो हज़ार लाख से ज़्यादा विद्यार्थी एक वृहत एवं विस्तृत शिक्षा व्यवस्था का निर्माण करते हैं, में बहुत स्पष्ट और तेज़ गति में परिवर्तन लाना असंभव तो नहीं परंतु कठिन अवश्य प्रमाणित हो रहा है। धीमी गति के परिवर्तनों के कारणों के बारे में विभिन्न गोष्ठियों, सम्मेलनों, बैठकों में जो एक विचार शत-प्रतिशत सामने आता है वह है – शिक्षकों की तैयारी। ऐसा नहीं है कि पिछले कुछ दशकों से इस ओर प्रयास नहीं किए जा रहे हैं; अथक प्रयास हो रहे हैं- शिक्षक-प्रशिक्षण सामग्रियों का निर्माण हुआ है। सर्व शिक्षा अभियान और राष्ट्रीय माध्यमिक शिक्षा अभियान के अंतर्गत लाखों शिक्षकों का प्रशिक्षण कराया जाता है परंतु फिर भी शोध प्रमाण, कक्षा प्रक्रियाओं में संतोषजनक प्रभाव का संकेत नहीं देते हैं। इसके बहुत सारे कारक भी शोध अध्ययनों द्वारा प्रस्तुत किए जाते हैं परंतु इस व्यवस्थागत सुधार से संबंधित प्रयास हर बार हमारे लिए प्रश्नचिह्न छोड़ जाते हैं।

शिक्षक हमारी शिक्षा व्यवस्था का एक ऐसा हिस्सा है जिससे पूरा समाज बहुत ही ज़्यादा अपेक्षाएँ रखता है। आज शिक्षा में उभरती सोच इस स्थिति को बदलने की बात कह रही है और शिक्षक को सुपर मानव न समझकर अपने जैसा साधारण मानव समझने पर ज़ोर है।

शिक्षक को साधारण मानव के रूप में समझा जाए या सुपर मानव, उसकी भूमिका स्कूल में प्रवेश करने से लेकर स्कूल की छुट्टी तक उन बच्चों के व्यक्तित्व को संवारने की है जिन्हें उनके माता-पिता ने दिन के एक-चौथाई हिस्से के लिए उनके हवाले किया है। समाज ने जिस व्यक्ति पर माता-पिता के बाद सबसे ज़्यादा विश्वास जताया है वह है शिक्षक। ऐसी स्थिति में विद्यालयी व्यवस्था को अपने जिस हिस्से पर सबसे ज़्यादा ध्यान देना चाहिए वह है शिक्षक का चुनाव व उसकी तैयारी।

विद्यालयी व्यवस्था के इस पहलू पर शोधकर्ता, विशेषज्ञ और संकाय सदस्य हमें अपनी शोध रपटें, विचार तथा लेख भेजते रहते हैं, जिनके द्वारा संवाद और विमर्श को आगे बढ़ाने में सहायता मिलती है। इस अंक में शामिल ललित कुमार; हंसराज पाल और राकेश देवड़ा; सुषमा जोशी; शोभारानी सभ्रवाल तथा जगमोहन सिंह राजपूत के लेख सामाजिक परिवर्तन में शिक्षक की महत्वपूर्ण भूमिका की बात करते हैं और बदलते युग में शान्ति की शिक्षा, जेंडर संवेदनशीलता इत्यादि सरोकारों के मद्देनज़र शिक्षक-शिक्षा में आमूल-चूल परिवर्तन का सुझाव देते हुए वर्तमान अध्यापक के सामने दिखाई दे रही चुनौतियों की भी बात करते हैं।

इस अंक में शिक्षक शिक्षा पर शामिल इन लेखों के साथ-साथ लता पाण्डे; दयाकृष्ण, सुनीता कुमारी नागर; रमाकर रायज़ादा; सुषमा शर्मा और नीलू ढल के लेख भी शामिल किये गये हैं जो शिक्षा के अन्य पहलुओं जैसे ज्ञान, पठन कौशल का विकास, योग की स्कूली शिक्षा में प्रासंगिकता, शिक्षा का अधिकार इत्यादि पर प्रकाश डालते हैं।

अकादमिक संपादकीय समिति